ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
RNI TITLED NO. UPBIL04292
RNI REG. NO. UPBIL/2014/66218
PP. No.- 150-153

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-16, No.- II, Issues-28, YEAR- April-June-2023

निकाय चुनावों में महिला प्रतिनिधित्व : महिला सहभागिता का एक समाजशास्त्रीय अध्ययन

1. डॉ0 निखिलानंद ठाकुर
2. आनंदी कुमारी

1. शोध पर्यवेक्षक, प्राध्यापक समाजशास्त्र, 2. शोध अध्येत्री– समाजशास्त्र विभाग, बी०डी० कॉलेज, पटना पाटलीपुत्र विश्वविद्यालय, पटना (बिहार), भारत

Received-07.05.2023, Revised-14.05.2023, Accepted-19.05.2023 E-mail: akbar786ali888@gmail.com

***सारांशः** भारत में स्थानीय स्वायत शासन का अस्तित्व प्राचीन काल से रहा है। उस समय भी महिलाओं की भागीदारी हुआ करती थी। स्वतंत्रता संघर्ष के क्रम में राजनीतिक और सामाजिक प्रक्रिया में महिलाओं के महत्त्व को समझा गया और उन्हें उचित स्थान मिला। महिलाओं को राजनीति क्षेत्र में भागीदारी देने के लिये संविधान में कुछ प्रावधान किये गये तथा पंचायतों में महिलाओं को आरक्षण दिया गया। अब महिलायें भी पंचायतों के काम में पुरुषों को कन्धे मिलाकर चल रही हैं।*

कुंजीभूत शब्द– स्थानीय स्वायत शासन, भागीदारी,स्वतंत्रता संघर्ष, राजनीतिक,सामाजिक प्रक्रिया, संविधान, प्रावधान, पंचायतों।

पंचायती राज परिदृश्य– भारत में पंचायतों की संख्या 2,25,000 है। पंचायत सदस्यों की संख्या 22,50,000 है। महिलाओं सदस्यों की संख्या 7,50,000 है । अनुसूचित जातिध जनजाति सदस्यों की संख्या 1,50,000 है। पंचायत अध्यक्ष 2,25,000 है। महिला पंचायत अध्यक्ष 75,000 है।

मध्यवर्ती स्तर पर अर्थात् प्रखण्ड स्तर पर सदस्यों की संख्या का विवरण इस प्रकार है :– प्रखण्ड समिति की संख्या 51,000 है। प्रखण्ड समिति में महिलाओं की संख्या 17,000 है। प्रखण्ड समिति में अध्यक्ष की संख्या 5100 है। प्रखण्ड समिति की महिला अध्यक्ष की संख्या 1700 है।

जिला परिषद् की संख्या 475 है। जिला परिषद् में पंचायत सदस्यों की संख्या 4750 है। महिला सदस्यों की संख्या 1583 है। जिला परिषद् के अध्यक्षों की संख्या 475 है। महिला अध्यक्षों की संख्या 158 है। (स्रोत :– मानव संसाधन एवं विकास मंत्रालय (महिला एवं विकास विभाग) तैयार फाइल)

भारत में पंचायतों का अस्तित्व बहुत पहले से है परन्तु 1992 में सरकार ने 73वें संविधान संशोधन अधिनियम द्वारा इसे पुनर्जीवित करने का प्रयास किया तथा यह अधिनियत 1993 मई से कार्य रूप में आया। महिलाओं को आरक्षण देने का मुद्दा 1985–86 में उठा उसी वर्ष केन्या के नैरोबी में एक राष्ट्रीय दस्तावेज पेश किया जिसमें महिलाओं के विकास का समुचित प्रबन्ध किया गया। इस दस्तावेज को नेशनल परस्पेक्टिव प्लान के नाम से जाना जाता है। भारत के राजनीतिक इतिहास में यह पहला समय था जब स्थानीय स्वाशासित संस्थाओं में एक तिहाई स्थान महिलाओं के लिये आरक्षित किए गए। वह संविधान संशोधन बलवंत मेहता समिति (1957) और अशोक मेहता समिति (1978) की सिफारिश थी कि निर्वाचित प्रतिनिधि तक ही शक्ति सीमित नहीं होना चाहिये। इस समिति की सिफारिशों के आधार पर सरकार के पंचायती राज व्यवस्था लागू की।

आजाद हिन्दुस्तान गाँवों का देश था। सन् 1951 में देश की आबादी की लगभग 83 प्रतिशत जनसंख्या गाँवों में रहती थी और आज भी लगभग तीन चौथाई लोग गाँवों में रहते हैं। आशय यह कि देश के विकास के लिये गाँवों को सर्वांगीय विकास अति आवश्यक था और आज भी है। ग्राम विकास राष्ट्र विकास का पर्याय बन गया है। ग्रामीण विकास के लिए यह आवश्यक हो जाता है कि हम समाज में ऐसे वर्ग की पहचान करें जो सामाजिक व आर्थिक दृष्टि से पिछड़े हों या असुविधाओं से वंचित हों तथा जिनके विकास के लिए आवश्यक कदम उठाये जाने जरूरी हों। जब हम अपने समाज को देखते हैं तो पाते हैं कि हमारे समाज का एक बहुत बड़ा वर्ग जो महिलाओं का है निश्चित रूप से सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक दृष्टि से पिछड़ा हुआ है। इनकी स्थिति को देखते हुए हम निःसंकोच ऐसे वर्ग में रख सकते हैं जिनके विकास के लिए विशेष कदम उठाये जाने की आवश्यकता है।

भारत के संविधान निर्माताओं ने इस बात को समझा था। संविधान के अनुच्छेद 15 में यह स्पष्ट रूप से कहा गया है कि लिंग के आधार पर महिलाओं के साथ किसी भी प्रकार से भेदभाव नहीं किया जा सकता है। अनुच्छेद 15 (3) में भी स्पष्ट रूप से महिलाओं और बच्चों के लिए राज्य को विशेष प्रावधान बनाने की अनुमति दी गयी है।

हमारे देश में लगभग तीन चौथाई लोग गाँवों में रहते हैं। महिलाओं की स्थिति अति दयनीय है। इसके प्रमुख कारण हमारे समाज का पुरुष प्रधान होना, महिलाओं की कमजोर आर्थिक, शैक्षणिक आदि स्थितियाँ हैं। ग्रामीण समाज में व्याप्त गरीबी के कारण यह स्थिति और खराब हुई। यद्यपि आजादी के बाद से ग्राम विकास के लिए चलाए गये कार्यक्रमों में महिलाओं को विशेष स्थान दिया गया किन्तु पुरुष शासित, रूढ़िवादी ग्रामीण समाज में कोई विशेष प्रगति देखने को नहीं मिली। सन् 1952 से ही ग्राम विकास के लिए पंचायती राज का सहारा लिया गया है।

प्राचीन काल से ही हमारे देश में पंचायत की परम्परा रही है। इस परम्परा की जड़ें इतनी गहराई तक गयीं कि हमारे ग्रामीण समाज की एक सुदृढ़ व्यवस्था में परिवर्तित हो गयीं । पंचायतें प्राचीन काल से ही सामाजिक जीवन के प्रत्येक पक्ष को प्रभावित करती रहीं हैं। समय के साथ–साथ शासक बदले किन्तु इनसे पंचायतों का काम–काज प्रभावित नहीं हुआ। पूर्ववत चलता रहा। इसका प्रमुख कारण यह भी था कि शासकों ने पंचायतों की कार्यप्रणाली में हस्तक्षेप की अनावश्यक चेष्टा नहीं की। मुगल शासनकाल तक इस व्यवस्था के साथ किसी भी प्रकार की छेड़खानी नहीं हुई। अंग्रेजों ने अपने शासनकाल में ऐसे बहुत सारे प्रयास किये जिससे इस सुदृढ़ व्यवस्था को आघात पहुंचा। जिसके परिणाम अंग्रेजी शासन के लिए भी घातक रहे। ब्रिटिश सरकार की सत्ता के ध्रुवीकरण के प्रति ललक ने ग्रामीण भारत सक्षम लोकतंत्रीय इकाइयों को प्रभावहीन बनाने का प्रयास किया। इस दौरान सरकारी नियंत्रण बढ़ाने तथा

अनुरूपी लेखक/संयुक्त लेखक

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-16, No.- II, Issues-28, YEAR- April-June-2023

पंचायतों के अधिकार कम करने के बहुतेरे प्रयास किये गये। जिसके प्रभाव उनके भी हक में नहीं थे। अंग्रेजी राज में ही उनको इसका आभास हो गया था। ऐसा प्रतीत होता है कि 1909, 1919 तथा 1935 के अधिनियम की गलती को सुधारने की दिशा में कदम थे। किन्तु पूरी तरह से जर्जर कर देने के बाद छोटी–मोटी मरम्मत से ढांचें को ठीक करने में वे सफल नहीं हो पाये। महात्मा गाँधी ने पंचायतों को पुनः जनाधार पोषित संस्था बनाने का प्रयास किया। ग्राम स्वराज्य जिसमें पंचायतों की भूमिका महत्त्वपूर्ण है। गाँधीवाद अर्थ दर्शन का अभिन्न अंग बना। स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद स्थानीय स्वशासन की संस्थाओं को सक्रिय एवं सुदृढ़ बनाने के प्रयास शुरू किये गये। संविधान में राज्य के नीति निर्देशक सिद्धान्तों के अनुच्छेद 40 में यह व्यवस्था की गई है कि राज्य ग्राम पंचायतों की स्थापना के लिए अग्रसर होगा और उनको ऐसी शक्तियां व अधिकार देगा, जो उन्हें स्वायत्त इकाइयों के रूप में कार्य करने योग्य बनाने में सहायक हों। इस व्यवस्था के अनुरूप देश के अन्य भागों में पंचायतें बनीं। स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद के कुछ सालों के बाद त्रिस्तरीय पंचायती राज के ढांचें की स्थापना से लोगों में इसके प्रति उत्साह था। किन्तु लोगों में यह भावना धीरे–धीरे बलवती होती गई, कि पंचायतों से ग्रामीण पुनर्निर्माण और सक्षम लोकतान्त्रिक विकेन्द्रीकरण की आशा को पूरा नहीं किया जा सका है। समय–समय पर लोगों की पंचायती राज से संबंधित आकांक्षा को पूरा करने का प्रयास सरकार द्वारा किया गया।

पंचायती राज संस्थाओं को सुदृढ़ करने के पीछे सरकार की मंशा थी कि गांव से जिला स्तर तक लोगों को पंचायती राज व्यवस्था जुड़ने पर ग्रामीण क्षेत्र का समुचित विकास होगा और गांव राष्ट्र की मुख्य विकास धारा से जुड़ सकेगा। पंचायती राज के त्रिस्तरीय ढांचे की स्थापना के बाद लोगों को पुनः आशा की किरण जगी। परन्तु पंचायतों से ग्रामीण पुनर्निर्माण और सक्षम लोकतान्त्रिक विकेन्द्रीकरण की आशा पूरी न हो सकी। इन कारणों से लोगों का उत्साह घटता गया। इसके पीछे एक प्रमुख कारण यह भी था कि पंचायती राज प्रतिनिधियों को विधायिका अपने प्रतिद्वंद्वी के रूप में देखती थी जिसके कारण प्रशासन द्वारा इन संस्थाओं को विशेष महत्त्व नहीं मिल पाया। यदि आज हम विधायिका के सदस्यों को देखें तो हम कह पायेंगे कि इनके पृष्ठभूमि में भी पंचायती राज का प्रतिनिधित्व रहा है। अतएव विधायकों तथा सांसदों द्वारा पंचायतीराज प्रतिनिधियों में भविष्य में अपना प्रतिद्वंद्वी देखना स्वाभाविक भी था। इनके अतिरिक्त पंचायती राज व्यवस्था में गिरावट के मुख्य कारण इस व्यवस्था में अंगीकृत अवधारणा में निहित विसंगतियां थीं। पंचायत राज व्यवस्था को विकास कार्यों में सहायक मानने के पक्ष पर जोर दिया गया। निर्णय की ताकत या तो प्रशासन के हाथ में रही या राज्य के हाथ में जो पंचायतों तक पहुंची ही नहीं। ग्रामीण आवश्यकताओं के कार्यक्रमों के बारे में निर्णय लेने की क्षमता का ध्रुवीकरण सांसद और विधान मंडलों के हाथ में होता गया।

पंचायती राज संस्थाओं की विभिन्न विसंगतियों का परिणाम यह हुआ कि पंचायतें निष्क्रिय होती गयीं। पंचायतें इस सीमा तक प्रभावहीन हो गयीं कि ग्रामीण क्षेत्र में जन सामान्य के लाभ के लिए सृजित परिसम्पत्ति की देखभाल करने में भी इनकी कोई महत्त्वपूर्ण भूमिका नहीं बची थी। विकास के कार्यों के क्रियान्वयन में भी इनकी भूमिका प्रभावहीन सी होने लगी थी। इनको पुनः प्रभावी बनाने के लिए संविधान के 64वें संशोधन की प्रक्रिया को एक प्रभावी कदम समझा जा सकता है। किन्तु इस संशोधन को मूर्तरूप न दिये जा सकने के कारण सुधार की आवश्यकता बनी रही।

सन् 1992 में, संविधान के 73वें संशोधन में पंचायती राज संस्थाओं की यथा स्थिति समाप्त करने और उन्हें अधिक सु.ढ़ करने तथा उनकी प्रभावी भूमिका सुनिश्चित करने का प्रयास किया गया। इस संशोधन के अनुसार अब जनतांत्रिक विकेन्द्रीकरण की इन संस्थाओं को संवैधानिक स्तर प्राप्त हो गया है। अब राज्यों के लिए यह आवश्यक हो गया है कि ये पंचायत संस्थाओं का गठन करें। संशोधन में पंचायतों की संरचना को विवेकपूर्ण बनाने की व्यवस्था है पंचायती राज संस्थाओं में प्रभुता संपन्न वर्ग विशेष के नेतृत्व के वर्चस्व को भी यथासंभव कम करने का प्रयास किया गया है। इसके लिए यह व्यवस्था की गयी है कि उनमें महिलाओं, अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लोगों के लिए स्थान सुरक्षित किया गया है। संविधान के इस संशोधन में महिलाओं पर विशेष ध्यान दिया गया है। इसके अनुसार हर वर्ग के लिए आरक्षित पदों की एक तिहाई संख्या पर आरक्षण उस वर्ग की महिलाओं का होगा।

पंचायती राज अधिनियम के अनुसार निर्वाचित इकाइयों को पांच साल का स्पष्ट कार्यकाल दिया गया है। इन्हें स्थानीय करों को लगाने, वसूल करने और खर्च करने का अधिकार है। पंचायतों को सामाजिक न्याय और आर्थिक विकास के अन्तर्गत आने वाले 21 विषयों के अन्तर्गत कार्यक्रम तैयार करने का अधिकार दिया गया हैं। इनमें खेती, छोटी सिंचाई, पशु व मछली पालन, सामाजिक वानिकी और वनों की सामान्य उपज, छोटे उद्योग, खादी और ग्रामोद्योग, ग्रामीण भवन निर्माण, पेयजल, ईंधन, चारा, सड़क, पुल, बिजली, ऊर्जा के नये स्रोत, गरीबी दूर करने के कार्यक्रम, शिक्षाः– प्राथमिक, माध्यमिक, तकनीकी, प्रौढ़ और अनौपचारिक, पुस्तकालय, हाट और मेले, स्वास्थ्य केन्द्र, परिवार कल्याण, महिलाओं और बच्चों का विकास, समाज कल्याण, कमजोर वर्गों विशेषकर हरिजनों और आदिवासियों का कल्याण, जल वितरण व्यवस्था सामुदायिक साधनों का रख–रखाव तथा भूमि के कानून और चकबंदी आदि शामिल हैं। इस प्रकार से पंचायती राज के अन्तर्गत ग्राम विकास के बहुत सारे पहलू सम्मिलित हैं। सिर्फ आवश्यकता है कि पंचायतों को सजग और सक्रिय करने की। समाज के हर वर्ग का प्रतिनिधित्व तो इसमें सुरक्षित किया जा चुका है। यदि हमारी पंचायती राज संस्थाएं अपने दायित्वों का सफलतापूर्वक निर्वाह करें तो गांवों का सामाजिक, आर्थिक व राजनैतिक विकास अवश्य होगा।

पंचायती राज संस्थाओं में हर वर्ग की महिलाओं को आरक्षण देकर निश्चित रूप से इनको ग्राम विकास की मुख्य धारा में जोड़ने का प्रयास किया गया है। यदि समाज के इस कार्य में जागरूकता लाई जाय तो विकास के सारे कार्यक्रम चाहे वे मजदूरी, रोजगार से संबंधित हों या स्वरोजगार से संबंधित हों महिलाओं के लिए विशेष प्रावधान होने के कारण गांवों को विकसित किया जा सकता है। इस प्रकार विकास के कार्यों में महिलाओं की भागेदारी व नेतृत्व आगे चलकर विधायिका में भी आरक्षण देने का रास्ता प्रशस्त होगा। इस

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-16, No.- II, Issues-28, YEAR- April-June-2023

प्रकार विधायिका में मिले आरक्षण से महिलाओं की राष्ट्रीय विकास में भागीदारी को सुनिश्चित किया जा सकता है। यह निसंदेह भारतीय राजनीति को नई दिशा प्रदान करेगा।

पंचायतों में महिलाओं को आरक्षण, सन् 1992 में किए गये दो संविधान संशोधनों के जरिए दिया गया था। आज इस व्यवस्था को पूरा एक दशक बीत चुका है और समीक्षा करने पर पता चलता है कि स्थिति की तस है। आज भी विभिन्न स्तरों से चुनाव जीत कर आयीं महिलाएं संविधान द्वारा दिए गये अपने अधिकारों का आजादी से प्रयोग कर पाने की स्थिति में नहीं हैं। वे सत्ता में तो आ रही हैं लेकिन स्वतंत्रतापूर्वक फैसले नहीं ले पा रही हैं। आज भी वे पुरुषों के बल पर ही कुर्सी पर काबिज होती हैं और फिर उन्हीं के दिशा–निर्देशों पर चलने को बाध्य होती हैं। इस कठपुतलीपन का एक कारण जहाँ उनकी अशिक्षा और राजनैतिक निष्क्रियता है वहीं इसका दूसरा कारण है कि आज भी उन पर से पुरुषों के बंधन ढीले नहीं पड़े हैं। इसीलिए वे कोई भी निर्णय लेने से पहले किसी पुरुष का मुंह ताकती हैं, फिर वह पुरुष चाहे उसका पति हो यां देवर या फिर भाई।

पुरुषों की इस नकारात्मक मानसिकता व सोच की यह कल्पना, मात्र कपोल–कल्पना ही नहीं है। पुरुषों की इस 'एंटी वीमेन' सोच को साबित करने वाली कई बातें हैं। समूची दुनिया की तरह हमारे देश में भी लगभग आधी जनसंख्या, महिलाओं की ही है लेकिन फिर भी पुरुष प्रधान इस राजनैतिक व्यवस्था ने पंचायतों में महिलाओं को 48 या 50 प्रतिशत आरक्षण देने की बात स्वीकार नहीं की। 'आधी दुनिया' और 'आधे आसमान' के सम्मान से नवाजने के बाद भी उन्हें मात्र 33 प्रतिशत आरक्षण ही क्यों दिया गया। आरक्षण का सिद्धांत यही है कि प्रत्येक वर्ग को उसकी संख्या के हिसाब से सभी जगह भागीदारी मिलनी चाहिए। इसीलिए तो कुल जनसंख्या का 25 प्रतिशत होने पर दलितों को एक–चौथाई आरक्षण मिलता है, पिछड़ों की जनसंख्या 50 प्रतिशत होने पर उन्हें भी पूरा आधा आरक्षण मिलता है। यदि दलितों तथा पिछड़ों को उनकी आबादी के हिसाब से आरक्षण मिल सकता है तो फिर 'आधी दुनिया के मामले में ऐसा क्यों नहीं हो पा रहा है? कारण साफ है और सबको पता है।

यह बिल्कुल सही है कि भारतीय संविधान ने महिला तथा पुरुषों के बीच लिंग के आधार पर कोई भेद नहीं किया है और दोनों को समान रूप से अधिकार दिए गये हैं। आजादी के बाद संविधान द्वारा लिंग–भेद की समस्त परंपराओं को दरकिनार करते हुए महिलाओं को भी समान अधिकार और समान सहभागिता के अवसर दिए गये थे, लेकिन महिलाएं अपने अधिकारों का प्रयोग धरातल पर नहीं कर पा रही हैं तो इसका कारण उनमें राजनैतिक व सामाजिक चेतना की कमी होना ही है। पुरुषों की मानसिकता भी इसके लिए बराबर की जिम्मेदार है। आज भी पुरुष प्रधान समाज, महिला को सिर्फ भोग्या बनाए रखने की अपनी सदियों पुरानी मानसिकता से उबर नहीं पाया है।

ऐसी डमी महिला उम्मीदवार जीतीं भी लेकिन फिर भी घर की दहलीज लांघने की उन्हें इजाजत नहीं मिली, वे जीत कर भी चारदीवारी के भीतर तक ही सीमित रहीं। पुरुषों ने उन्हें सिर्फ कागज या रजिस्टर पर अंगूठा लगाने या हस्ताक्षर करने भर का अधिकार दिया था। पिछले पंचायती चुनावों के तुरंत बाद एक गैर–सरकारी स्वैच्छिक संगठन ने राज्य सरकार की एक एजेंसी के साथ मिल कर उत्तर प्रदेश में एक सर्वेक्षण किया। सर्वेक्षण के नतीजे चौंकाने वाले थे। सर्वेक्षण के मुताबिक उत्तर प्रदेश के पंचायती चुनावों में आरक्षण का लाभ लेकर 80 प्रतिशत से भी अधिक ऐसी महिलाएं जीत कर (या जितवा कर) आयीं, जिन्हें 'रबर–स्टैंप' के अलावा और कुछ कहा ही नहीं जा सकता था। उत्तर प्रदेश, बिहार और उड़ीसा जैसे बीमारू प्रदेश हों या फिर महाराष्ट्र, गुजरात, पंजाब और आंध्र प्रदेश जैसे अपेक्षाकृत काफी विकसित व शिक्षित राज्य हों, स्थिति सभी जगह कमोबेश एक जैसी ही है। इन सभी राज्यों में ऐसे एक नहीं, कई–कई उदाहरण हैं, जहाँ ग्राम पंचायत, विकास खण्ड या जिला पंचायतों में निर्वाचित महिलाओं के स्थान पर उनके पति, भाई या पुरुष अभिभावक ही बैठकों में भाग लेते हैं, अधिकारियों से बातचीत करते हैं।

सर्वेक्षण के मुताबिक अधिकतर निर्वाचित महिला जनप्रतिनिधियों को तो अपने राजनैतिक अधिकारों का पता तक नहीं है, उन्हें नहीं पता कि सत्ता में रहते हुए वे क्या–क्या कर सकती हैं, कैसे जनसेवा के कार्य को अंजाम दे सकती हैं विधायिका में महिला आरक्षण विधेयक पेश करते समय हमें यह भी सोचना होगा कि हमसे भूल कहां हुयी, गलती किसकी है? और यह गलती कैसे सुधारी जा सकती है? इस दुर्भाग्यपूर्ण स्थिति का बस एक ही कारण समझ में आता है– शिक्षा और राजनीतिक जागरुकता की कमी सत्ता में भागीदारी के लिए आवश्यकता है राजनैतिक सोच की, राजनैतिक विचारधारा की और राजनैतिक समझदारी की। और इस राजनैतिक सोच को पैदा किया जा सकता है मात्र राजनैतिक जागरुकता से।

विश्व परिप्रेक्ष्य में देखें तो हमारे यहाँ शिक्षा का प्रसार बेहद कम है। महिला शिक्षा के मामले में तो हमारी स्थिति और भी दयनीय है। महानगरों और कुछ शहरों को छोड़ दें तो दूरदराज के हमारे गाँवों में आज भी लड़कियों का दिन सुबह चूल्हे–चौके से शुरू होता है और रात को रसोई की सफाई के साथ खत्म हो जाता है। अधिकतर लड़कियाँ स्कूलों का मुँह तक नहीं देख पातीं और जो किसी तरह गाँव की प्राइमरी पाठशाला में पहुँच भी जाती हैं तो पाँचवीं के बाद उनकी पढ़ाई खत्म करवा दी जाती है क्योंकि उनके परिवार वाले आगे की पढ़ाई के लिए उन्हें नजदीक के दूसरे गाँव या पास के कस्बे में नहीं भेजना चाहते। इसलिए आवश्यकता इस बात की है कि महिलाओं को आरक्षण के साथ–साथ सरस्वती की प्रतीक किताबें भी दी जाएं, उनके हाथों में चकले–बेलन के साथ–साथ कलम भी थमाई जाएं।

बिहार पंचायती राज व्यवस्था में महिलाओं को 50 प्रतिशत आरक्षण देते समय हमारे पुरुष समाज के प्रतिनिधि अच्छी तरह से जानते थे कि इन चुनावों में जो महिलाएं विजयश्री का वरण करने के बाद सत्ता में भागीदारी' को आगे आएंगी उनमें से अधिकतर वे महिलाएं होंगी जो अशिक्षित और राजनीतिक रूप से निष्क्रिय होंगी तथा परंपरागत रूप से पुरुषों की मुट्ठी में कैद होंगी। हमारी पुरुष

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-16, No.- II, Issues-28, YEAR- April-June-2023

प्रधान राजनैतिक व्यवस्था ने तब सोचा था कि ऐसी महिलाओं को रबर–स्टैंप के रूप में प्रयोग करना कोई कठिन काम नहीं होगा और उन्हें कठपुतली की भांति अपने इशारों पर नचाना आसान होगा। बाद के अनुभव बताते हैं कि पुरुषों की वह सोच ठीक साबित हुयी, पुरुष–प्रधान व्यवस्था ने जो सोचा था बिल्कुल वैसा ही हुआ।

पुरुष–प्रधान व्यवस्था ने यह सोच, सामूहिक रूप से विकसित नहीं की थी, इसके लिए कोई बैठक या सम्मेलन नहीं हुआ था। मनोविज्ञान कहता है कि बहुत सी बातें हमारे अवचेतन मन में पड़ी रहती हैं, जो मनुष्य की सदियों पुरानी मानसिकता योजनारहित परिणाम होती हैं। महिलाओं को जब नई पंचायतराज व्यवस्था में 50 प्रतिशत स्थानों का आरक्षण मिल गया तो पुरुष वर्ग ने घरेलू औरतों की आड़ में अपना शासन चलाने की डगर अपना ली। यह सब किसी योजना के बिना ही संपन्न हुआ, क्योंकि जैसा कि अभी हमने कहा है बहुत से निर्णय मनुष्य सोच–विचारकर नहीं लेता बल्कि वे सदियों की परंपरा एवं मानसिकता के गर्भ से अपने–आप फूट निकलते हैं। जब आरक्षण का एक ऐसा ही प्रश्न महिलाओं के लिए संसद और विधान सभाओं में 33 प्रतिशत स्थान आरक्षित करने का आया तो इसके लिए राजनीतिक दल इतनी आसानी से तैयार नहीं हो पाए, जितनी आसानी से वे पंचायतराज व्यवस्था में महिलाओं को आरक्षण देने के लिए तैयार हो गए थे। क्यों? इसका एक कारण तो संभवतया यही रहा है कि संसद और विधानसभाओं के प्रतिनिधित्व में आकाश और पाताल का अंतर है।

साधारण पुरुष इस बिंदु को भली प्रकार जानता है कि पंचायतराज व्यवस्था में वह अपने परिवारों की जिन शिक्षित, अशिक्षित महिलाओं को बहुत ही कम चुनाव–व्यय पर चुनाव में जिताकर उनकी आड़ में स्वयं शासन कर सकता है, वैसा संसद एवं विधानसभाओं में इतना आसान नहीं है। समाज के एक साधारण पुरुष ने भी अपने अनुभव के बल पर यह बात जान ली है कि जब वह अपने बीच के और अपने–जैसे पुरुष प्रतिनिधियों को ही संसद और विधानसभाओं में भेजने के लिए सक्षम नहीं हो रहा है, वहाँ भी साधन–संपन्न लोग ही अपनी शक्ति और पैसे के बल पर विजयी होकर पहुँच रहे हैं, तब वह आम महिलाओं को संसद और विधानसभाओं में जनप्रतिनिधि बनाकर कैसे भेज सकेगा? विचित्र बात है कि इस आरक्षण का विरोध जहाँ सामान्य पुरुषों की ओर से हुआ, वहीं कई प्रमुख राजनीतिक दलों के बड़े नेताओं ने भी उसका विरोध किया। उन्हें यह आशंका सताने लगी कि इतना बड़ा आरक्षण देने के उपरांत महिलाओं की ओर से उनके अधिकारों को चुनौती मिल सकती है। इसलिए उन्होंने अल्पसंख्यक महिलाओं के लिए भी अलग से आरक्षण देने का सुझाव रखते हुए इस बिल का विरोध किया। परिणामतः अभी तक यह विधेयक संसद में लंबित है। यह सही है कि देर–सबेर इसे पारित हो ही जाना है, किंतु जिस तरह वोट की राजनीति इसका समर्थन कर रही है, उसी तरह राजनीतिक हथकंडेबाजी इसके विरोध में मुखर है। पुरुषों ने पंचायतीराज व्यवस्था में घरेलू महिलाओं को इसलिए जाने दिया कि वे पदासीन होते हुए भी पुरुषों के चंगुल से बाहर जानेवाली नहीं थीं, किंतु वे महिलाओं को दिल्ली और अन्त प्रांतों की राजधानियों में भेजना इसलिए पसंद नहीं कर रहा है कि उसे महिलाओं के अपने हाथ से निकल जाने का डर है।

आज नहीं तो कल संसद में महिला आरक्षण विधेयक पारित हो ही जायेगा लेकिन गूढ़ प्रश्न फिर भी वहीं जस का तस है कि मात्र आरक्षण मिल जाने और महिलाओं के विधानसभाओं और संसद में पहुँच जाने से क्या महिलाओं की सत्ता में भागीदारी भी सुनिश्चित हो जायेगी। सवाल है कि एक आम भारतीय महिला वास्तव में चाहती क्या है? वो चाहती है सिर्फ समाज में समानता का अधिकार, समानता का आधार और पुरुषों जैसा ही मान–सम्मान। इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए राजनैतिक अधिकार और आरक्षण तो जरूरी हैं ही, लेकिन साथ ही आवश्यकता है पुरुषों की रूढ़िवादी सोच में मौलिक बदलाव लाने की, पुरुष प्रधान राजनीतिक व्यवस्था को उखाड़ फेंकने की और महिलाओं को हीनभावना से उबार कर राजनीतिक रूप से जागृत करने की। हमें अपनी विधायिका में सशक्त महिला राजनीतिज्ञ चाहिए न कि डमी और कठपुतली राजनीतिज्ञ जो पुरुषों के इशारों पर ही नाचती रहें। इसलिए जरूरी है कि विधायिका में महिलाओं को आरक्षण देने के साथ–साथ उन्हें राजनैतिक रूप से जागरूक भी किया जाए ताकि वे सच्चे अर्थों में राजनैतिक भागीदारी पा सकें, स्वतंत्र राजनीतिक निर्णय ले सकें' और 'आधी दुनिया' के लिए कुछ सार्थक काम कर सकें।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. बंधोपाध्याय, डी० और मुखर्जी, अमिता (2007) : महिला पंचायत सदस्यों का सशक्तिकरण, कॉन्सेप्ट पब्लिशिंग कम्पनी, नई दिल्ली।
2. जोषी, आर०पी० एवं मंगलानी रूपा (1998) : पंचायती राज के नवीन आयाम, यूनिवर्सिटी बुक हाउस प्रा० लि०, जयपुर।
3. खन्ना, बी०एस० (1994) : पंचायती राज इन इण्डिया, रूरल लोकल सेल्फ गवर्नमेंट, नई दिल्ली।
4. महिपाल, (2002) : पंचायतों में महिलाएँ सीमाएं और संभावनाएं, सारांश प्रकाशन, नई दिल्ली।
5. राठौर, मधु (2002) : पंचायत राज और महिला विकास, पॉइंटर पब्लिशर्स, जयपुर।
6. सिसोदिया, यतीन्द्र सिंह (2000) : पंचायती राज एवं अनुसूचित जाति महिला नेतृत्व, रावत पब्लिकेशन्स, जयपुर।
7. कौशिक, सुशीला (1993) : वुमन्स एण्ड पंचायती राज, हर आनन्द पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली।
8. कुमावत, ललित (2004) : पंचायती राज एवं वंचित महिला समूह का उभरता नेतृत्व, क्लासिकल पब्लिशिंग कम्पनी, नई दिल्ली।

*****